श्री साईसच्चरित

।। अथ श्रीसाईसच्चरित।। अध्याय २२ वा।।

।। श्रीगणेशाय नमः।। श्रीसरस्वत्यै नमः।। श्रीगुरुभ्यो नमः।। श्रीकुलदेवतायै नमः।। श्रीसीतारामचंद्राभ्यां नमः।। श्रीसद्गुरुसाईनाथाय नमः।। जय सद्गुरो आनंदघना। ज्ञानस्वरूपा परमपावना। जय जयाजी भवभय-निकंदना। कलिमलदहना परिपूर्णा।।१।। तूं आनंदसागर तुजवरी। उठती नाना वृत्तिलहरी। त्याही तूंच तूंच आवरीं। कृपा करीं निजभक्तां।।२।। अल्पाधारींचा जो साप। तोच प्रकाशी दोर आपाप। अल्पांधार प्रकाशस्वरूप। दोहींचा बाप तूं एक।।३।। सर्पाकार वृत्तीचा जनिता। तिजलाच दोराचा आकार देता। तूंच भीतीतें उत्पन्नकर्ता। अंतीं निर्वारिताही तूंच।।४।। आधीं जेव्हां पूर्णांधार। नाहीं सर्प नाही दोर। वृत्ति उठाया नाहीं थार। तोही निराकार तूं होसी।।५।। पुढें निराकाराचा आकार। तोही अल्प प्रकाशाचा अवसर। तेणें आभासूं लागला विखार। आभासा कारणही तूंच।।६।। ऐसा दृश्यादृश्य भाव। हा तव वृत्त्यानंदप्रभाव। भावाभावरहित स्वभाव। नलगे ठाव कवणाही।।७।। श्रुति मौनावल्या ऐशियास्तव। अशेष मुखांहीं करितांही स्तव। शेषही नेणे स्वरूप वास्तव। तें मी कवण जाणावया।।८।। बाबा तव स्वरूपदर्शना। वांचून कांहीं रुचेना मना। वाटे आणावें तेंच ध्याना। ठेवावें लोचनांसमोर।।९।। केवळ शुद्धज्ञानमूर्ति। व्हावया आत्यंतिक सौख्यपूर्ति। नाहीं तुझिया पायांपरती। आणिक गति आम्हांतें।।१०।। काय ती तव नित्याची बैठक। दर्शना येती भक्त अनेक। ठेवूनियां पायीं मस्तक। प्रेमें निजसुख लुटीत।।११।। तोही तुझा पाय कैसा। शाखा-चंद्रन्याय जैसा। पादांगुष्ठ कवळी तैसा। दर्शनजिज्ञासा पूरवी।।१२।। कृष्णपक्षाची पंचदशी। अमावास्या अंधारी निशी। उलटतां चंद्रदर्शनाची असोसी। होते सकळांची साहजिक।।१३।। सरतां वद्य पक्षाची निशा। चंद्रदर्शनीं उपजे आशा। जो तो अवलोकी पश्चिम दिशा। दृष्टि आकाशा लावुनी।।१४।। ती निजभक्तांची असोसी। पुरविसी निज पायांपासीं। वामजानूवरी दक्षिण पायासी। ठेवूनि बैससी जे समयीं।।१५।। वामकर तर्जनी मध्यमांगुळी। शाखा बेचकें अंगुष्ठ जो कवळी। त्या दक्षिणपादांगुष्ठाजवळी। नखचंद्र झळाळी बीजेचा।।१६।। दर्शनाची जिज्ञासा थोर। एरव्हीं नभीं दिसेना कोर। ज्ञाता मग या बेचक्यासमोर। आणोनि नजर लावीं म्हणे।।१७।। पहा आतां या बेचक्यामधून। समोर होईल चंद्रदर्शन। कोर जरी ती होती लहान। जाहली तेथून दृग्गोचर।।१८।। धन्य अंगुष्ठमहिमान। वेणीमाधव स्वयें होऊन। गंगा यमुना प्रकटवून। दासगणूतें तुष्टविलें।।१९।। प्रयागतीर्थीं करावें स्नान। म्हणून मागतां आज्ञापन। ''हा मदंगुष्ठ प्रयाग जाण। करीं अवगाहन तेथेंच''।।२०।। ऐसें बाबा म्हणतां डोई। दासगणूनें ठेवितां पायीं। गंगा यमुना उभयतोयीं। प्रकटल्या पाहीं ते ठायीं।।२१।। ऐसिया त्या प्रसंगावर। दासगणूचें पद तें सुंदर। ''अगाध शक्ती अघटित लीलापर''। श्रवणतत्पर जरी श्रोते।।२२।। साईसच्चरित-चतुर्थाध्यायीं। दासगणू निजवाणीं तें गाई। पुनश्च श्रोतां वाचितां ते ठायीं। पुन्हांही नवाई प्रकटेल।।२३।। म्हणवूनि शाखा-चंद्रन्याय। अंगुष्ठीं तर्जनी-मध्यमा उभय। ठेवूनि दावी साईमाय। सोपा उपाय निजभक्तां।।२४।। म्हणे होऊनि निरभिमान। सर्वांभूतीं खालवा मान। करा एक अंगुष्ठध्यान। सोपें साधन भक्तीचें।।२५।। आतां पूर्वील कथानुसंधान। जाहलें भक्तानुग्रह-कथन। पुढील अपूर्व चरित्रश्रवण। अवधानपूर्ण परिसिजे।।२६।। शिरडी जाहलें पुण्यक्षेत्र। बाबांचेनि तें अति पवित्र। यात्रा वाहे अहोरात्र। येती सत्पात्र पुण्यार्थी।।२७।। दाही दिशांसी जयांची साक्ष। पटून राहिली प्रत्यक्ष वा परोक्ष। साईवेषें हा कल्पवृक्ष। अवतरला प्रत्यक्ष शिरडींत।।२८।। अकिंचन वा संपत्तिमान। देखे समस्तां समसमान। दावून कांहीं अतर्क्य विंदान। भक्तकल्याण साधी जो।।२९।। काय ती निःसीम प्रेमळता। नैसर्गिक ज्ञानसंपन्नता। तैसीच आत्यंतिक सर्वात्मभावता। धन्य अनुभविता भाग्याचा।।३०।। कधीं दृढ मौनधारण। हेंच जयांचें ब्रह्मव्याख्यान। कधीं चैतन्य-आनंदघन। भक्तगणपरिवेष्टित।।३१।। कधीं गूढार्थध्वनित बोलणें। कधीं थट्टेनें विनोद करणें। कधीं संदिग्धता सोडून देणें। कातावणें चालावें।।३२।। कधीं भावार्थ कधीं विवेक। कधीं उघडें निश्चयात्मक। असे अनेकीं अनेक। उपदेश देख करीत ते।।३३।। ऐसें हें साईसमर्थाचरित। मनोबुद्धिवाचातीत। अकळ करणी अकल्पित। अनिर्ज्ञात अवचित।।३४।। धणी न पुरे मुख अवलोकितां। धणी न पुरे संभाषण करितां। धणी न पुरे वार्ता परिसतां। आनंद चित्ता न समाये।।३५।। मोजूं येतील पर्जन्यधारा। बांधूं येईल मोटे वारा। परी या साईंच्या चमत्कारा। कवण मापारा मोजील।।३६।। असो आतां पुढील कथा। साईंची भक्तसंरक्षणीं चिंता। तैशीच दुर्धरप्रसंग-निवारकता। स्वस्थचित्ता परिसावी।।३७।। कैसें भक्तांचें गंडांतर। जाणून देती वेळीं धीर। टाळूनि करीत निजपदीं स्थिर। कल्याणतत्पर सर्वदा।।३८।। ये अर्थींची आख्यायिका। रिझवील तुम्हां श्रवणोत्सुकां। वाढवील साईसमागम-सुखा। श्रद्धा भाविकां उपजवील।।३९।। असोत हीन दीन बापुडीं। वाढेल साईकथेची आवडी। जपतां साईनाम हरघडी। लावील परथडी साई त्यां।।४०।। काकासाहेब मिरीकर। निवास शहर अहमदनगर। प्रसन्नपणें जयां सरकार। पाववी सरसार पदवीतें।।४१।। चिरंजीवही कर्तव्यतत्पर। कोपरगांवचे मामलेदार। असतां चिथळीचे दौऱ्यावर। आले शिरडीवर दर्शना।।४२।। मशिदींत जाऊन बैसतां। बाबांचे चरणीं मस्तक ठेवितां। क्षेमकुशल पुसतां सवरतां। कथावार्ता

चालल्या।।४३।। होती तेथें बरीच मंडळी। माधवरावही होते जवळी। कथामृताची ते नवाळी। अवधानशीळीं सेविजे।।४४।। कैसी भावी संकटसूचना। सोपाय तन्निवारणयोजना। करून कैसें रक्षित भक्तजनां। अघटितघटना बाबांची।।४५।। बाबा मिरीकरांस ते ठायीं। पुसती प्रश्न पहा नवलाई। ''अहो ती आपुली द्वारकामाई। आहे का ठावी तुम्हांतें''।।४६।। बाळासाहेबांस हा कांहीं। मुळींच उलगडा झाला नाहीं। तंव बाबा वदती ''आतां पांहीं। द्वारकामाई ती हीच।।४७।। हीच आपुली द्वारकामात। मशिदीचे या अंकीं बैसतां। लेंकुरां देई ती निर्भयता। चिंतेची वार्ता नुरेचि।।४८।। मोठी कृपाळू ही मशीदमाई। भोळ्या भाविकांची ही आई। कोणी कसाही पडो अपायीं। करील ही ठायींच रक्षण।।४९।। एकदां हिचे जो अंकीं बैसला। बेडा तयाचा पार पडला। साऊलींत हिचे जो पहुडला। तो आरूढला सुखासनीं।।५०।। हीच द्वारका द्वारावती''। बाबा मग तयांस देती विभूति। अभय हस्त शिरीं ठेविती। जावया निघती मिरीकर।।५१।। आणीक वाटलें बाबांचे जीवा। मिरीकरांतें प्रश्न पुसावा। ठावा का तुज लांब बावा। आणीक नवलावा तयाचा।।५२।। मग मूठ वळूनि डावा हात। कोपरापाशीं उजवे हातांत। धरूनि फिरवीत मुखें वदत। ''ऐसा भयंकर असतो तो।।५३।। परी तो काय करितो आपुलें। आपण द्वारकामाईचीं पिल्लें। कोणा न उमगे तिचें केलें। कौतुक उगलें पहावें।।५४।। द्वारकामाई असतां तारिती। लांब बाबा काय मारिती। तारित्यापुढें मारित्याची गती। ती काय किती समजावी''।।५५।। याच प्रसंगीं हा खुलासा। बाबांनीं कां करावा ऐसा। मिरीकरांशीं संबंध कैसा। लागली जिज्ञासा सकळिकां।।५६।। बाबांस पुसाया नाहीं धीर। तैसेंच चरणीं ठेवूनि शिर। चिथळीस जावया झाला उशीर। म्हणून मिरीकर उतरले।।५७।। होते माधवराव बरोबरी। दोघे जों पोहोंचले मंडपद्वारीं। माधवरावांस बाबा माघारी। ''येईं क्षणभरी'' म्हणाले।।५८।। म्हणती ''शामा तूंही तयारी। करीं जाईं त्याचे बरोबरी। मारून ये चिथळीची फेरी। मौज भारी होईल''।।५९।। तात्काळ शामा खालीं उतरला। मिरीकरांसन्निध आला। म्हणे आपुले टांग्यांत मजला। येणें चिथळीला आहे की।।६०।। घरीं जाऊन करितों तयारी। हा आलोंच जाणा सत्वरी। बाबा म्हणती तुम्हांबरोबरी। चिथळीवरी जावें म्यां।।६१।। तयांस वदती मिरीकर। चिथळीपर्यंत इतकें दूर। तुम्ही येऊन काय करणार। व्यर्थ हा जोजार तुम्हांला।।६२।। माधवराव मागें परतले। जें झालें तें बाबांस कथिलें। बाबा म्हणती ''बरें झालें। काय कीं हरवलें आपुलें।।६३।। मंत्र तीर्थ द्विज देव। दैवज्ञ वैद्य कीं गुरुराव। यांच्या ठायीं जैसा भाव। तैसाच उद्‌भव फलाचा।।६४।। आपण चिंतावें नित्य हित। उपदेशावा अर्थ विहित। असेल जैसें जयाचे कर्मांत। तैसेंच निश्चित घडेल''।।६५।। इतक्यांत मिरीकर शंकले। पाहिजेत बाबांचे शब्द मानिले। माधवरावांस हळूच खुणाविलें। चला म्हणाले चिथळीला।।६६।। मग ते म्हणती थांबा येतों। पुन्हां बाबांची अनुज्ञा घेतों। हो म्हणतां तेक्षणींच परततों। आतांच येतों माघारा।।६७।। निघालों होतों तुम्हीं परतविलें। बाबा म्हणाले बरें झालें। काय आपुलें त्यांत हरवलें। स्वस्थ बसविलें मजलागीं।।६८।। आतां पुनश्च विचार घेतों। हो म्हणतांच सत्वर येतों। म्हणतील जैसें तैसें करितों। दास मी तों आज्ञेचा।।६९।। मग ते जाती बाबांप्रती। म्हणती मिरीकर बोलाविती। चिथळीस मजला सवें नेती। आज्ञा मागती आपुली।।७०।। मग ते हांसून म्हणती साई। ''बरें तो नेतो तर तूं जाईं। नांव हिचें मशीदमाई। ब्रीदास काई घालवील।।७१।। आई ती आई बहु मायाळू। लेंकरालागीं अति कनवाळू। परी लेंकरेंच निघतां टवाळू। कैसा सांभाळू करी ती''।।७२।। मग वंदोनि साईपायां। निघाले माधवराव जाया। मिरीकर होते जया ठाया। तांग्यांत बैसाया पातले।।७३।। उभयतां ते चिथळीस गेले। तपासांतीं हुजूरवाले। येणार परी नाहीं आले। मग ते बैसले निवांत।।७४।। मारुतीचे देवालयीं। उतरण्याची होती सोयी। उभयतांहीं मग ते ठायीं। प्रयाण लवलाहीं केलें कीं।।७५।। एक प्रहर झाली निशी। टाकूनि सत्रंजी बिछाना उशी। बत्तीचिया उजेडापाशीं। वार्ता पुसीत बैसले।।७६।। वृत्तपत्र होतें तेथ। उघडून मिरीकर वाचूं लागत। नवलविशेषीं लोधलें चित्त। तों नवल विचित्र वर्तलें।।७।। सर्प एक त्या काळवेळे। कैसा कोठूनि आला नकळे। बैसला करूनियां वेटोळें। चुकवूनि डोळे सकळांचे।।७८।। मिरीकरांचे कंबरेवर। होता उपरण्याचा पदर। तया मृदुल आसनावर। शांत निर्धोर बैसला।।७९।। प्रवेश करितां ओजें ओजें। सुर सुर सुर सुर कागद वाजे। परी न कोणा तया आवाजें। घेणें साजे सर्पशंका।।८०।। इतुका भयंकर जरी प्रसंग। मिरीकर खबरपत्रांत दंग। परी पट्टेवाल्याचें अंतरंग। कल्पनातरंगीं वाहविलें।।८१।। येतो कोठूनि तो आवाज। असावा कशाचा काय काज। म्हणोनि उचलितां बत्ती जूज। लंबूमहाराज देखिले।।८२।। देखतांच तो घाबरला। साप रे साप हळूच ओरडला। मिरीकरांचा धीरचि सुटला। कंप सुटला सकळांगा।।८३।। शामरावही चकित झाले। म्हणती बाबा हें काय केलें। नसतें विघ्न कोठूनि धाडिलें। आतां निरसिलें पाहिजे।।८४।। मग पाहूनि ते अवस्था। जयाचे जें जें लागलें हाता। तें तें घेऊनि धांवले तत्त्वतां। वाजूं न देतां पदातें।।८५।। तों तो सर्प कंबरेखालता। देखिला हळू हळू सरकतां। सर्प कैंचा ती मूर्त अनर्थता। उतरताहे वाटली।।८६।। पहातां पहातां तें ग्रहण सुटलें। बडगे आधींच होते उचलले। धडाधड ते सर्पावर पडले। जाहले तुकडे तयाचे।।८७।। एणेंपरी अरिष्ट टळळें। पाहूनि मिरीकर अति गहिंवरले। साईसमर्थाचियावरलें। प्रेम तरतरलें अतितर।।८८।। दुःखाचे शहारे मावळले। प्रेम डोळां वाहूं लागलें। केवढें हें अरिष्ट टळलें। कैसें कळलें बाबांना।।८९।। कैसें हें गंडांतर चुकलें। बाबांनीं वेळीं कैसें सुचविलें। नको म्हणतां टांग्यांत बैसविलें। शामास दिधलें साह्यार्थ।।९०।। किती तरी दया पोटीं। काय ती त्यांची अंतर्दृष्टि। जाणूनि पुढील वेळ ओखटी। वार्ता गोमटी कथियेली।।९१।। दर्शनाचें माहात्म्य दाविलें। मशिदीचें महत्त्व ठसविलें। निजप्रेम निदर्शना आणिलें। सहज लीलेकरून।।९२।। एकदां एक मोठे ज्योतिषी। नाना डेंगळे नाम जयांसी। होते श्रीमंत बुट्टींपासीं। म्हणाले तयांसी तें परिसा।।९३।। आजिचा दिवस अशुभ फार। आहे आपणां गंडांतर। अंतरीं असों द्यावा धीर। असावें फार सावध।।९४।। डेंगळ्यांनीं ऐसें कथितां। बापूसाहेब अस्वस्थ चित्ता। राहून राहून करिती चिंता। दिवस जातां जाईना।।९५।। पुढें मग नित्याचे वेळीं। मशिदीस निघाली मंडळी। बापूसाहेब नानादि सकळी। जाऊनि बैसली बाबांकडे।।९६।। तात्काळ बाबा बुट्टींस पुसती।

''काय हे नाना काय वदती। ते काय तुज माराया बघती। नलगे ती भीती आपणा।।९७।। कैसा मारतोस पाहूं मार। खुशाल त्यांना देईं उत्तर''। असो ऐसें झालियानंतर। पहा चमत्कार पुढील।।९८।। सायंकाळीं बहिर्दिशेस। बापूसाहेब शौचविधीस। गेले असतां शौचकूपास। आला ते समयास सर्प एक।।९९।। पाहूनियां तें विघ्न भयंकर। बापूसाहेब आले बाहेर। लहानू तयांचा करी जों विचार। दगडानें ठार करूं या।।१००।। लहानू दगड उचलूं जाई। बापूसाहेब करिती मनाई। म्हणती जा काठी घेऊन येईं। बरी न घाई ये कामीं।।१०१।। गडी जों गेला काठीकरितां। सर्प भिंतीवर चढूं लागतां। झोंक जाऊन पडला अवंचिता। गेला सरपटा भोकांतुनी।।१०२।। तेथून मग तो गेला पळून। उरलें न मारावयाचें कारण। जाहलें बाबांच्या शब्दांचें स्मरण। संकटनिवारण उभयत्र।।१०३।। असो हा साईसमागम सोहळा। भाग्यें पाहिला जयानें डोळां। तयासी तो स्मरणावेगळा। कदाकाळा करवेना।।१०४।। ऐसऐशी प्रत्यंतरें। दावून आकर्षिलीं भक्तांतरें। वर्णूं जातां कागद न पुरे। वर्णन न सरे कदापि।।१०५।। ऐसेंच एक कथांतर। रात्र पडतां दोन प्रहर। प्रत्यक्ष घडलें चावडीवर। बाबांचे समोर तें परिसा।।१०६।। कोराळे तालुका कोपरगांव। वतनवाडीचा मूळ गांव। अमीर शक्कर जया नांव। जयाचा भाव साईपदीं।।१०७।। जात खाटिक धंदा दलाल। वांद्र्यांत जयाचा बोलबाल। दुखण्यानें गांजला प्रबळ। अति विकळ जाहला।।१०८।। पडतां संकट आठवे देव। सोडिली धंद्याची उठाठेव। निरवून सारी देवघेव। ठोकिली धांव शिरडीस।।१०९।। कुंती पांच पांडवांची आई। अज्ञात आणि वनवासापायीं। कष्टली जरी अनंत अपायीं। प्रार्थी अपायचि देवातें।।११०।। म्हणे देवा परमेश्वरा। सौख्य द्या जी मागत्या इतरा। मज द्या निरंतर दुःख परंपरा। पाडी न विसरा तव नामीं।।१११।। तेंच कीं देवा माझें मागणें। देणें तरी मज हेंच देणें। होईल मग तव नाम तेणें। अखंड लेणें मम कंठा।।११२।। श्रोता वक्ता अहर्निशीं। हेंच कीं मागूं साईंपाशीं। विसर न व्हावा तव नामाशीं। पायापाशीं ठेविजे।।११३।। असो अमीरें केलें नमन। विधियुक्त बाबांचें हस्तचुंबन। व्याधीचेंही सविस्तर निवेदन। दुःखविमोचन प्रार्थिलें।।११४।। जडला जो होता वातविकार। पुसिला तयाचा प्रतिकार। बाबा मग देती प्रत्युत्तर। व्हावें सुस्थिर चावडींत।।११५।। मशिदींतून नेमानें रातीं। बाबा जया चावडीप्रती। एक दिवसा आड जाती। अमीरा वसती ते स्थानीं।।११६।। अमीर गांजले संधिवातें। कुठेंही गांवांत सुखानें राहाते। कोराळ्यासही जाऊन पडते। अधिक मानवतें तयांना।।११७।। चावडी ती मलिकंबरी। जीर्ण झालेली खालींवरी। जेथें सरड पालीं विंचू विखारीं। स्वेच्छाचारीं नांदावें।।११८।। त्यांतचि वसती रोगी कुष्टी। कुत्रीं तेथेंच खातीं उष्टीं। अमीर झाला मोठा कष्टी। चालती न गोष्टी बाबांपुढें।।११९।। मागील भागांत भरला कचरा। ढोपर ढोपर छिद्रें सतरा। हाल खाईना तयाचे कुत्रा। ती एक यात्राच जन्माची।।१२०।। वरून पाऊस खालून ओल। जागा उंच नीच सखोल। वाऱ्याथंडीचा एकचि कल्लोळ। मनासी घोळ अमीराचे।।१२१।। सांधे धरले शरीराचे। स्थळ तें वाऱ्यापाउसाचें। ओल तों तेथें ऐशापरीचें। औषध बाबांचें वचन कीं।।१२२।। तयास बाबांचे ठाम बोल। वारा पाऊस वा असो ओल। जागा उंच नीच वा सखोल। तयाचें तोल करूं नये।।१२३।। जरी तें स्थान विकल्पास्पद। साईसमागम महाप्रसाद। तयांचें वचन हेंचि अगद। मानूनि सुखद राहिला।।१२४।। चावडी चढतां तेथें समोर। बिस्तरा लावून मध्यावर। नऊ महिने त्या चावडीवर। अमीर शक्कर राहिला।।१२५।। अंगीं खिळला संधिवात। अनुपान बाह्यतः सर्व विपरीत। परी अंतरीं विश्वास निश्चित। तेणें यथास्थित जाहलें।।१२६।। नऊ महिने तेथेंच वास। नेमिला होता अमीरास। मनाई होती दर्शनास। मशिदीसही यावया।।१२७।। परी ती चावडी ऐसें स्थान। दिधलें होतें तयास नेमून। कीं बाबांचें आपाप दर्शन। प्रयासावीण घडतसे।।१२८।। तेंही रोज सांज सकाळा। शिवाय एकांतरा दोनी वेळां। तेथें तया चावडीचा सोहळा। मिळे डोळाभर पहावया।।१२९।। रोज सकाळीं भिक्षेस जातां। चावडीवरूनच बाबांचा रस्ता। सहज दर्शन जातां येतां। स्थान न सोडितां अमीरास।।१३०।। तैसेच रोज अस्तमानी। चावडीसमोर बाबा येऊनी। तर्जनी मस्तक डोलवुनी। दिग्वंदनीं सन्निष्ठ।।१३१।। तेथून मग माघारा जात। समाधिगृहाचे कोनापर्यंत। तेथून माघारा मशिदींत। भक्तसमवेत ते जात।।१३२।। चावडी एका दिसा आड। नांवाला एक पडदा आड। दोघांमाजीं फळ्यांचें कवाड। दोघांही आवड गोष्टींची।।१३३।। तेथेंच पूजा तेथेंच आरती। होऊन भक्तजन घरोघर जाती। तेथून पुढें स्वस्थ चित्तीं। मग ते बोलती परस्पर।।१३४।। बाह्यात्कारें बंदिवास। आंतून साईंसीं दृढ सहवास। भाग्यावीण हा लाभ इतरांस। भोगावयास दुर्मिळ।।१३५।। तरीही अमीर कंटाळला। एकेच स्थानीं रहावयाला। बंदिवासचि तो तया गमला। म्हणे गांवाला जावें कोठें।।१३६।। स्वातंत्र्याची हौस मना। त्या काय आवडे परतंत्रपणा। पुरे आतां हा बंदिखाना। उठली कल्पना अमीरा।।१३७।। निघाला बाबांच्या अनुज्ञेवीण। त्यागूनि आपुलें नियमित स्थान। गेला कोपरगांवालागून। राहिला जाऊन धर्मशाळे।।१३८।। तेथें पहा चमत्कार। मराया टेकला एक फकीर। तृषेनें व्याकुळ होऊन फार। पाजा घोटभर पाणी म्हणे।।१३९।। अमीरास आली दया। गेला पाणी पाजावया। पाणी पीतांक्षणीं ते ठाया। पडली काया निचेष्टित।।१४०।। झालें तयाचें देहावसान। जवळपास नाहीं कोण। त्यांतही रात्रीचा समय पाहून। गडबडलें मन अमीराचें।।१४१।। प्रातःकाळी भरेल ज्युरी। त्या आकस्मिक मरणावरी। होईल सुरू धराधरी। तपास करील सरकार।।१४२।। घडलेली वार्ता जरी खरी। सकृद्दर्शनीं कोण निर्धारी। निकाल साक्षी-पुराव्यावरी। ऐसी ही परी न्यायाची।।१४३।। मींच यातें पाणी पाजितां। फकीर अवचित मुकला जीविता। ऐसी सत्य वार्ता मी वदतां। लागेन हातां आयताच।।१४४।। माझा संबंध येईल आधीं। धरितील मजलाचि यासंबंधीं। पुढें ठरतां मरणाची आदी। मी निरपराधी ठरेन।।१४५।। परी तें ठरेपर्यंतचा काल। जाईल दुःसह होतील हाल। तैसाच आल्या वाटेनें पळ। काढावा तात्काळ हें ठरलें।।१४६।। म्हणोन अमीर रातोरात। निघाला तेथून कोणी न देखत। पुढें जातां मागें पाहत। अस्वस्थचित्त मार्गांत।।१४७।। चावडी कैसी येते हातीं। मनास तोंवर ना निश्चिती। ऐसा अमीर शंकितवृत्ती। शिरडीप्रती चालला।।१४८।। म्हणे बाबा हें काय केलें। काय कीं हें पाप ओढवलें। माझेंच कर्म मजला फळलें। तें मज कळलें

संपूर्ण।।१४९।। सुखालागीं सोडिली चावडी। म्हणून माझी तोडिली खोडी। असो आतां या दुःखांतूनि काढीं। नेऊनि शिरडींत घाली गा।।१५०।। केली तयारी हातोहात। अमीर निघाला रातोरात। टाकून तेथें तैसेंच प्रेत। धर्मशाळेंत त्या रात्रीं।।१५१।। ''बाबा बाबा'' मुखें वदत। क्षमा करा करुणा भाकीत। पातला जेव्हां चावडीप्रत। जाहला स्वस्थ चित्तांत।।१५२।। एवंच हा तरी एक धडा। तेथून कानास लाविला खडा। अमीर वर्तूं लागला पुढां। सोडून कुडा कुमार्ग।।१५३।। असो विश्वासें गुण आला। वातापासून मुक्त झाला। पुढें कैसा प्रसंग पातला। प्रकार घडला तो ऐका।।१५४।। चावडीस अवघे तीन खण। आग्नेयी कोण बाबांचें ठिकाण। चहूं बाजूंनीं फळ्यांचें वेष्टण। करिती शयन तैं बाबा।।१५५।। अवघी रात्र बत्त्या तेवती। सदैव उजेडांत निजती। फकीर फुकरे बाहेर बैसती। बाह्य प्रदेशीं अंधार।।१५६।। अमीर जणूं त्यांतचि एक। आजूबाजूस इतर लोक। तेही लवंडती तेथचि देख। ऐसे कैक ते असती।।१५७।। तेथेंच बाबांचे पश्चाद्भागीं। सरसामान कोठीचे जागीं। भक्त अबदुल परम विरागी। सेवेस निजांगी तत्पर।।१५८।। ऐसें असतां मध्यरात्रीसी। बाबा आक्रंदत अबदुल्लासी। म्हणती माझिया बिछान्याचे कुशी। पहा रे विवशी आदळली।।१५९।। हांकेपाठीं हांक देती। अबदुल पातला बत्ती हातीं। बाबा आक्रंदें तयास म्हणती। आतां होती ना ती तेथें।।१६०।। अबदुल म्हणे सारें पाहिलें। येथें न कांहींच दष्टीस पडलें। बाबा म्हणती उघडून डोळे। नीट सगळें देखें रे।।१६१।। पाही अबदुल फिरफिरून। बाबा सटक्यानें ताडिती जमीन। बहिर्निद्रिस्त सकळ जन। जागृत होऊन अवलोकिती।।१६२।। जागा झाला अमीर शक्कर। म्हणे हा आज काय कहर। हे अपरात्रीं सटक्याचे प्रहार। होतात वरचेवर कां बरें।।१६३।। पाहूनि ही बाबांची लीला। अमीर तात्काळ मनीं तरकला। विखार कोठें तरी प्रवेशला। कळोनि आला बाबांस।।१६४।। तयास बाबांचा फार अनुभव। ठावा तयास बाबांचा स्वभाव। आणि तयांच्या बोलण्याची माव। त्यानें हें सर्व जाणलें।।१६५।। अरिष्ट जेव्हां भक्तांचे उशाशीं। म्हणतील बाबा तें आपुले कुशीसी। भाषा ही अवगत अमीरासी। तेणें हें मनाशीं ताडिलें।।१६६।। इतुक्यांत त्याच्याच उशाकडे। कांहीं विळविळतां दृष्टी पडे। ''अबदुल बत्ती रे बत्ती इकडे''। म्हणून ओरडे अमीर।।१६७।। बत्ती आणितांच बाहेर। पसरलें दिसलें वेटोळें थोर। प्रकाशें तो दिपला विखार। मान खालींवर करीतसे।।१६८।। तेथेंच केली तयाची शांती। बाबांचे बहदुपकार मानिती। म्हणती काय ही विलक्षण पद्धती। देती जागृती कैसी कीं।।१६९।। कैंचीं विवशी कैंचीं बत्ती। काळवेळेची द्यावी जागृती। निजभक्तांची संकटनिर्मुक्ति। हेच युक्ति ते होती।।१७०।। ऐशा सर्पांच्या अगणित कथा। येतील बाबांच्या चरित्रीं वर्णितां। होईल ग्रंथाची अति विस्तरता। म्हणून संक्षेपता आदरिली।।१७१।। ''सर्प विंचू नारायण''। साधु तुकारामांचें वचन। ''परी ते सर्व वंदावे दुरून''। हेंही वचन तयांचें।।१७२।। तेच म्हणती तयां 'अधर्म'। तयां 'पैजारीचें काम'। तयांसंबंधें वर्तनक्रम। कळेना ठाम निर्बंध।।१७३।। जयाचा जैसा स्वभावधर्म। तदनुसार तयाचें कर्म। जैसा ईश्वरी नेमानेम। हेंचि कीं वर्म तेथील।।१७४।। या शंकेचें समाधान। बाबांपाशीं एकच जाण। जीवमात्र समसमान। अहिंसा प्रमाण सर्वार्थी।।१७५।। विंचू काय सर्प काय। ईश्वरचि सर्वांचा ठाय। तयाची इच्छा नसतां अपाय। करवेल काय त्यांचेनी।।१७६।। हें विश्व अवघें ईश्वराधीन। स्वतंत्र येथें कांहीचही न। हें बाबांचें अनुभवज्ञान। आम्हां दुरभिमान सोडीना।।१७७।। तळ्यांत पडला विंचू तळमळी। खालीं जातां पाण्याचे तळीं। एक आनंदें वाजवी टाळी। म्हणे तूं छळिसी ऐसाच।।१७८।। एक ऐकूनियां ती टाळी। धांवत आला तळ्याचे पाळीं। पाहूनि विंचू खातां गटंगळी। करुणाबहाळीं कळवळे।।१७९।। मग तो जाऊनि तयाजवळी। हळूच चिमटींत विंचू कवटाळी। तेणें जातिस्वभावें उसळी। मारूनि अंगुळी डंखिली।।१८०।। येथें काय आमुचें ज्ञान। आम्ही सर्वथैव पराधीन। बुद्धिदाता नारायण। घडवील आपण तें खरें।।१८१।। अनेकांचे अनेक अनुभव। मीही कथितों निजानुभव। साईवचन विश्वासगौरव। केवळ वैभव निष्ठेचें।।१८२।। जैसे काकासाहेब दीक्षित। दिवसा वाचीत नाथभागवत। तैसेच ते प्रतिरात्रीं नित। रामायण-भावार्थ वाचीत।।१८३।। टळेल देवावरचें फूल। टळेल एकवेळ अंघोळ। टळेल इतर नेम सकळ। वाचनवेळ अटळ ती।।१८४।। हे दोन्ही ग्रंथ नाथांचे। सारसर्वस्व परमार्थाचें। समर्थसाईंच्या अनुग्रहाचें। द्योतक साचें दीक्षितां।।१८५।। या अद्वितीय गोड ग्रंथीं। आत्मज्ञान वैराग्य नीति। यांची अखंड त्रिगुण ज्योति। दिव्यदीप्ति प्रकाशे।।१८६।। यांतील बोधामृताचा प्याला। जया सभाग्याचे ओंठास लागला। तयाचा त्रिताप एकसरा शमला। मोक्ष लागला पातें।।१८७।। साईकृपें दीक्षितांला। श्रवणासी श्रोता व्हावा झाला। योग भागवतश्रवणाचा आला। उपकार झाला मज तेणें।।१८८।। जाऊं लागलों दिवसरात्र। ऐकावा त्या कथा पवित्र। भाग्यें उघडलें श्रवणसत्र। पावन श्रोत्र तेणेनी।।१८९।। असो ऐसी एक रात्र। कथा चालतां परम पवित्र। आडकथा जी घडली विचित्र। श्रोतां तें चरित्र ऐकिजे।।१९०।। काय करूं एक वानितां। मध्येंच दुसरें स्फुरे चित्ता। जाणोनि तयाची श्रवणार्हता। किमर्थ उपेक्षिता होऊं मी।।१९१।। चालली सुरस रामायणी कथा। पटली मातेची खूण हनुमंता। तरी कसूं जाई स्वामीची समर्थता। अंतीं अनर्थता भोगिली।।१९२।। लागतां रामबाणपिच्छाचा वारा। हनुमंत अंबरीं फिरे गरगरा। प्राण कासावीस घाबरा। पिता ते अवसरा पावला।।१९३।। ऐकोनि तयाचें हितवचन। हनुमंत रामासी आला शरण। होत असतां या भागाचें श्रवण। घडलें विलक्षण तें ऐका।।१९४।। चित्त कथाश्रवणीं संलग्न। श्रवणानंदीं सकळ मग्न। तों एक वृश्चिक मूर्तविघ्न। कैसें की उत्पन्न जाहलें।।१९५।। नकळे तया ही काय आवडी। नकळत माझिया स्कंधीं उडी। मारिली देऊनि बैसला दडी। रससुखाडी चाखीत।।१९६।। येथेंही बाबांची साक्ष माझें नव्हतें तिकडे लक्ष। परी जो हरिकथेसी दक्ष। तया संरक्षक हरि स्वयें।।१९७।। सहज गेली माझी नजर। पाहूं जातां विंचू भयंकर। माझिया दक्षिण स्कंधावर। उपरण्यावर सुस्थिर।।१९८।। नाहीं चलन ना वलन। स्वस्थचित्त दत्तावधान। श्रोता जणूं श्रवणपरायण। स्वस्थ निजासन विराजित।।१९९।। उगीच देवस्वभावानुसार। नांगीस चाळविता लवभार। तरी बैसाया देता न थार। दुःख अनिवार वितरिता।।२००।। रामकथेचा होता रंग। श्रोते वक्ते पोथींत दंग। सकळांचा करिता रसभंग। ऐसा हा कुसंग दुर्धर।।२०१।। रामकथेचा हाचि महिमा। विघ्नांचा तेथें न चलें गरिमा। तियें

पावावें लागे उपरमा। निजधर्मा विसरूनि।।२०२।। रामकृपेनें लाधलों बुद्धि। हळूच दूर टाकावी उपाधी। विसंबूं नये तो चंचलधी। परमावधी होई तों।।२०३।। होतें जें उपरणें पांघुरलें। हळूच दोंबाजू सांवरिलें। आंत विंचूस दृढ गुंडिलें। नेऊनि पसरिलें बागेंत।।२०४।। विंचू जात्याच भयंकर। वेळीं जाईलही जातीवर। भय खरें परी बाबांची आज्ञाही सधर। मारावया कर धजेना।।२०५।। येथें श्रोतियां सहजी शंका। विंचू घातकी वध्य नव्हे कां। डंखितां देईल कां तो सुखा। मारूं नये कां न कळे कीं।।२०६।। सर्व विंचू विषारी प्राणी। नुपेक्षी तयां कदा कोणी। बाबा काय तयालागोनि। द्यावें सोडूनि म्हणतील।।२०७।। श्रोतियांची शंका खरी। माझीही होती तीच परी। परी पूर्वील ऐसिया प्रसंगाभीतरीं। परिसा वैखरी बाबांची।।२०८।। प्रश्न होता याहून बिकट। शिरडींत काकांचे वाडिया प्रकट। एकदां माडीवर खिडकीनिकट। विखार बिकट आढळला।।२०९।। चौकटीतळीं चित्रद्वारें। भीतरीं प्रवेश केला विखारें। दिपला दीपज्योतिनिकरें। वेटोळें करूनि बैसला।।२१०।। दीपप्रकाणें जरी दिपला। मनुष्याच्या चाहुलें बुजाला। गजबज झाली तैसा चमकला। क्षणैक उगला राहिला।।२११।। मागें न जाई पुढें न येई। खालींवर करी डोई। मग एकचि उडाली घाई। कैशा उपायीं मारावा।।२१२।। कोणी बडगा कोणी काठी। घेऊनि आले उठाउठीं। जागा सांकड तयासाठीं। बहुत कष्टी जाहले।।२१३।। सहज मारिता एक सरपटी। आणि उतरता भिंतीतळवटीं। प्रथम गांठिता माझीच वळकटी। महत्संकटीं टाकिता।।२१४।। लागला वर्मीं तरी तो घाव। चुकतां डंख धरितां अपाव। बत्ती आणूनि लक्षिती ठाव। तंव त्या वाव सांपडला।।२१५।। त्याची आली नव्हती वेळ। आम्हां सकळांचें दैवही सबळ। होती जरी ती काळ वेळ। केला प्रतिपाळ बाबांनीं।।२१६।। आल्या मार्गें करूनि त्वरा। निघून गेला तो झरझरा। स्वयें निर्भय निर्भय इतरां। सुख परस्परां वाटलें।।२१७।। मग मुक्ताराम उठला। म्हणे बिचारा बरा सुटला। नसता त्या छिद्रद्वारें निसटला। होता मुकला प्राणाला।।२१८।। मुक्तारामाची दयार्द्र दृष्टी। पाहोनि झालों मी मनीं कष्टी। काय कामाची दया दुष्टीं। चालेल सृष्टी कैसेनी।।२१९।। मुक्तारामा ये कदाकाळीं। आम्ही बसूं तैं सांज-सकाळीं। माझी तों वळकटी खिडकीजवळ। मज ते बोली नावडली।।२२०।। पूर्वपक्ष त्यानें केला। उत्तरपक्ष म्यां उचलिला। एकचि वाद मातून राहिला। निर्णय ठेला तैसाच।।२२१।। एक म्हणे सर्प मारावा। क्षण एकही न उपेक्षावा। दुजा म्हणे निरपराध जीवा। कां दुष्टावा करावा।।२२२।। एक मुक्तारामाचा धिक्कार। एक माझा पुरस्कार। बाद बळवला परस्पर। अंतपार येईना।।२२३।। गेले मुक्ताराम खालीं। म्यां आपुली जागा बदलली। छिद्रास एक गुडदी बसविली। वळकटी पसरली निजावया।।२२४।। डोळे लागले पेंगावया। मंडळी गेली निजावया। मीही देऊं लागलों जांभया। वाद आपसया थांबला।।२२५।। रात्र सरली उजाडलें। शौच मुखमार्जन आटोपलें। बाबा लेंडीवरून परतले। लोक जमले मशीदीं।।२२६।। नित्याप्रमाणें प्रातःकाळीं। आलों मशिदीस नित्याचे वेळीं। मुक्तारामादि सर्व मंडळी। आली बसली स्वस्थानीं।।२२७।। कोणी हातावर तमाखू चुरिती। कोणी बाबांची चिलीम भरिती। कोणी तैं हातपाय दाबिती। सेवा ये रीतीं चालली।।२२८।। बाबा जाणती सकळांच्या वृत्ती। मग ते हळूच प्रश्न पुसती। वादावादी ती काय होती। ती गतरातीं वाड्यांत।।२२९।। मग मीं जें जें जैसें घडलें। तैसें तैसें बाबांस कथिलें। मारावें वा न मारावें पुसिलें। सर्पास वाहिलें ये स्थितीं।।२३०।। बाबांची तों एकचि परी। सर्प विंचू झाले तरी। ईश्वर नांदे सर्वांभीतरीं। प्रेमचि धरी सर्वार्थीं।।२३१।। ईश्वर जगाचा सूत्रधारी। तयाच्या आज्ञेंत वर्ततीं सारीं। हो कां विखार विंचू तरी। आज्ञेबाहेरी वर्तेना।।२३२।। म्हणवूनि प्राणिमात्रांवरी। प्रेम आणि दयाच करीं। सोडीं साहस धरीं सबूरी। रक्षिता श्रीहरी सकळांतें।।२३३।। येणेंपरी कितीशा कथा। साईबाबांच्या येतील सांगतां। म्हणवून यांतील सारचि तत्त्वतां। निवडूनि श्रोतां घ्यावें कीं।।२३४।। पुढील अध्याय याहून गोड। भक्तिश्रद्धेची ती जोड। भक्त दीक्षित प्रसंग अवघड। निघतील बोकड मारावया।।२३५।। स्वस्ति श्रीसंतसज्जनप्रेरिते। भक्तहेमाडपंतविरचिते। श्रीसाईसमर्थसच्चरिते। अपमृत्युनिवारणं नाम द्वाविंशोऽध्यायः संपूर्णः।।

।। श्रीसद्गुरुसाईनाथार्पणमस्तु।। शुभं भवतु।।